International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 7 Issue 05 Ver. I ||May. 2018 || PP.74-78

नगरीय समाज में महिलाओं की सामाजिक स्थिति

डॉ जितेंद्र कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर
समाजशास्त्र विभाग एस. एम. कॉलेज चंदौसी

मानव जीवन की तीन मूलभूत आवश्यकताएं हैं– भोजन, वस्त्र और आवास । पौष्टिक भोजन, स्वच्छ वस्त्र तथा साफ–सुथरा आवास मानव की कार्य क्षमता एवं जीवन को सुचारू रूप से सक्रिय रखने के लिए न्यूनतम एवं वांछनीय आवश्यकताएं हैं। वर्त्तमान युग में मशीनीकरण का युग है। औद्योगिकी करण के जिनते भी आयाम है, सब मशीन पर निर्भर हैं, लेकिन इन मशीनों की कार्यक्षमता को बनाये रखने अथवा अनुकूल दशाओं के विकास के लिए श्रमिकों का संतुलित एवं पौष्टिक आहार शरीर ढूंढनें को पर्याप्त मात्रा वस्त्र और प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षित रखने के लिए स्वास्थ्य कर आवास की उपलब्धि नितान्त आवश्यक है । लेकिन औद्योगिक प्रगति के बाद आज श्रमिकों के आवास की व्यवस्था अच्छी नहीं है । उन्हें गंदी बस्तियों में ही रहना पड़ता है। अतः वर्त्तमान युग में गंदी बस्तियों की समस्या बनती जा रही है । इसी कारण हाउस ने नगर को जीवन और समस्याओं का विशिष्ट केंद्र माना है ।

जहाँ तक भारत जैसे विकासशील देश का प्रश्न है, गंदी बस्ती की समस्या यहां अत्यधिक गंभीर है। लोगों को बुरी आर्थिक दशा के कारण यह बढ़ती हुई जनसंख्या, उन्नत तकनीकी और धीमी प्रगति से होने वाले औधोगिकीकरण का ही परिणाम है। भारत में गंदी बस्ती का उदय कब हुआ, इसका निश्चित समय नहीं बतलाया जा सकता है। लेकिन जैसे–जैसे समय बिताता जा रहा है नई–नई गंदी बस्तियों का विस्तार हो रहा है। इस प्रकार गन्दी बस्तियाँ प्रायः सभी बड़े नगरों में विकसित हुई है ।

दुनिया में कोई ऐसा देश नहीं है जहाँ गन्दी बस्ती की समस्या का निराकरण कर दिया गया हो । यधपि संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत रूस आर्थिक और तकनीकी रूप में उन्नत देश हैं, फिर ही सस्ते और स्वस्थ आवास व्यवस्था की समस्या विभिन्न उपायों को अपना कर भी नहीं सुलझाया जा सका है। 19 वीं एवं 20 वीं शताब्दी में विज्ञान, उद्योग वृद्धि और शिक्षा में अत्यधिक वृद्धि हुई। चिकित्सा विज्ञान ने व्यक्ति को दीर्घायु बनाया है। पिछले 100 वर्षों में संसार की जनसंख्या दुगुनी हो गयी है। भारत में जनसंख्या में भी तीव्र गति से वृद्वि हुई है। पिछले 10 वर्षों की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 1981 में 84.4 करोड़ हो गई । यह वृद्धि 23 प्रतिशत की दर से हैं । ग्रामीण जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है किन्तु अत्यधिक निर्धनता के कारण ग्रामीण निवासी बहुत बड़ी संख्या में नगरों में काम की तलाश में आ रहे हैं।

इससे नगरों में आवास की समस्या उत्पन्न हुई है। औद्योगिक नगरों में जनसंख्या का दबाव अत्यधिक बढ़ गया है। मलिन एवं गंदी बस्तियाँ मूलतः औद्योगिक नगरों एवं महानगरों की उपज है। यहां व्यक्तियों को छोटा बड़ा काम मिल जाता है, पर रहने को घर नहीं मिलता । इसलिए इन महानगरों को मलिन बस्तियों में शरण मिलती है।

गंदी बस्ती का सामान्य अर्थ प्रत्येक तरह की कठिनाईयों जैसे जर्जर आवास व्यवस्था और गंदगी युक्त पर्यावरण तथा वातावरण से है। गंदी बस्तियां की सामान्य परिभाषा करना अत्यत्न कठिन है क्योंकि प्रत्येक देश आर्थिक स्थिति के अनुरूप ही गंदी बस्तियाँ स्थापित होती हैं। गंदी बस्तियां झोपड़ी सराय ,छोटी–छोटी कोठरियां, खपडैल और बांस से बने हुए कच्चे मकान, टिन शेड से निर्मित मकान, लकड़ी की छोटे केबिन आदि से स्थापित हो जाती हैं। एक स्थान पर बस्तियों की उत्पत्ति के लिए कोई निश्चित पर्यावरण निर्धारित करना कठिन है ।यह कभी भी विकसित हो सकती है। फिलिपाइन्स के दलदली क्षेत्रों में, छोटे–छोटे पहाड़ी क्षेत्रों में और युद्ध में जो स्थान नष्ट हो गए थे वहां गंदी बस्तियां स्थापित हो गई है लैटिन अमेरिका में छोटे–छोटे पहाड़ों की ढ़लान पर गंदी बस्तियाँ हैं। करांची में कब्रिस्तान और सड़क के किनारे इन्हें देखा जा सकता है। भारत में भी इसे इस रूप में देखा जा सकता है। रवालपिंडी और दक्षिणी स्पेन में प्राचीन गुफाओं में इनके दर्शन किए जा सकते हैं। अहमदाबाद, कानपुर, कलकत्ता, बम्बई, मद्रास कें एक कमरे की अंधेरी कोठरियों की गंदी बस्तियों में संख्या अत्याधिक है। गिस्ट और हलबर्ट गंदी बस्तियों को विशिष्ट क्षेत्रों का विशिष्ट स्वरूप बताते हैं, तथा क्वीन एवं थामस गंदी बस्तियों को और रोगग्रस्त क्षेत्रों में पर्यायवाची समझते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि गंदी बस्तियों के स्वरुप में विविधताएँ हैं। प्रत्येक देश की गंदी बस्ती का अपना स्वरुप है किन्तु उसका पर्यावरण और रहने की दशाएं लगभग समान हैं। इसमें निवास करने वाले निर्धन, बेरोजगार और कम आय वाले व्यक्ति हैं जिनका न कोई मकान है और न मकान होने की आशा है। यहां वह आवासीय अनाथालय है जहां जमीन की समस्त असुविधाएं एक साथ देखने को मिलती हैं, जहां व्यक्ति नहीं, व्यक्ति के नाम पर वे पशु की तरह जीवनयापन करते हैं। औद्योगिक क्रांति के विकास ने उद्योगों का विकास किया किन्तु अपने करोड़ों श्रमिकों को रहने के लिए घर नहीं दिया। गंदी बस्तियाँ बहुत कुछ इस औद्योगिक क्रांति का परिणाम हैं ।

गंदी बस्तियों के कारण– गंदी बस्तियों का जन्म अचानक ही नहीं हो गया है वरन इसकी पृष्ठभूमि में अनेक मौलिक तत्व हैं जो इनकी वृद्धि के कारण बने हैं।यह निम्नलिखित हैं :

निर्धनता : निर्धनता अभिशाप है। निर्धन व्यक्ति के लिए यह भू–लोक ही नरक है । निर्धन, बेरोजगार, दैनिक वेतन भोगी श्रमिक ये सब उस वर्ग के व्यक्ति हैं जो कठोर परिश्रम करने के पश्चात भी दो समय का भोजन अपने परिवार को नहीं दे पातें हैं। परिणामतः इनके बच्चे कुपोषण का शिकार बन जाते हैं। बढ़ती महंगाई, कम आमदनी ,निर्धन को उच्च पौष्टिक मूल्यों वाले भोज्य पदार्थों को खरीदने के योग्य नहीं छोड़ती है। अभावों में जीना इनकी मजबूरी है।

नगरों में आवास समस्या – नगरों में भूमि सीमित है और मांग अत्यधिक है। भूमि का मूल्य भी यहां आकाश छूता है। सामान्य व्यक्ति भूमि क्रय करके नगर में मकान नहीं बना सकता है। नगर में किराये के मकान भी समान्य व्यक्ति नहीं ले सकता है। लाखों श्रमिकों जिसके साधन और आय सीमित हैं उसे विवश होकर गंदी बस्तियों में रहना पड़ता है। मकान कम है और रहने वाले व्यक्ति कहीं अधिक हैं और परिणाम स्वरूप गंदी बस्तियों में निरन्तर वृद्वि होती जा रही है। स्थानाभाव के चलते संक्रमण तथा रोग व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। छोटे छोटे बच्चे अपने परिवार के साथ तंग जगह में रहते हैं। परिवार में पड़ी बीमार व्यक्तियों के साथ रहने पर संक्रामक कीटाणु उन्हें भी संक्रमण के जाल में फंसा लेता है। फलतः डायरिया, मीजल्स आदि के बाद भूख खत्म हो जाती है और शरीर निर्बल होकर कुपोषण की स्थिति में चला जाता है ।

नगरीय जनसंख्या का दबाव– बढ़ती जनसंख्या के साथ जमीन तो बढ़ी नहीं फलस्वरूप रोजगार की खोज में लोग गांव से शहरों की तरफ भाग रहे हैं। जहां उन्हें राहत के स्थान पर तमाम तकलीफों का सामना करना पड़ता है। रहने को मकान नहीं, खाने को अच्छा खाना नहीं, शुद्ध पानी नहीं, गंदगी से भरा वातावरण तथा भीड़–भाड़, इन सबके कारण उनका स्वाथ्य गिरता जाता है फलतः वे कुपोषण के शिकार हो जाते हैं, जिसका प्रभाव उनके बच्चों पर पड़ता है ।

औद्योगिक क्रांति– गंदी बस्तियों की उत्पत्ति में औद्योगिक क्रांति की महत्वपूर्ण भूमिका है। औद्योगिक नगर में जीविका के अनके विकल्प उपस्थित होते हैं। लाखों की संख्या में ग्रामीण व्यक्ति यहां अधिक से अधिक धन अर्जित करने की कल्पना सजाए आता है परंतु उसे यहां निराशा ही हाथ लगती है। वह मिल, फैक्टरी, कारखाना या और किसी प्रकार का श्रम करके पेट भरता है। निर्धनता उनका स्थायी धन है। इसे औद्योगिक महानगरीय सभ्यता और संस्कृति में उसे तो गंदी बस्तियों में रहना पड़ता है। उसके पास इसके अतिरिक्त विकल्प की ही क्या है ?

शिक्षा और जागरूकता का अभाव– शिक्षा और जागरूकता के अभाव में गंदी बस्तियों के विकास में वृद्धि हुई है। वे व्यक्ति जो निर्धनता के शिकार हैं, वे गंदी बस्तियों की गंदगी से भी अनभिज्ञ हैं। जहां सुविधाएं नाम को भी नहीं है और बीमारियों और सामाजिक बुराइयां असीमित है। फिर भी यहां इसलिए आतें हैं क्योंकि उन्हें नाम मात्र का किराया देना पड़ता है। अशिक्षा के चलते भोजन के पौष्टिक तत्वों के संरक्षण की विधि से लोग वाकिफ नहीं हैं। भोजन को तल कर खाने में उन्हें, इस बात का अंदाजा नहीं लगता है कि वे अपने ही हाथों से, जो कुछ उन्हें मिल सकता था, उसे भी नहीं ले रहें हैं। भोजन में पकाया पानी या माड़ आदि निकालकर, न जाने कितने पोषक तत्व वे स्वयं नष्ट कर देते हैं। शिक्षा और जागरूकता के अभाव में वे अपने ही हाथों से अपनी ही क्या, अपनी अगली पीढ़ी की भी हानि कर रहें हैं ।

गतिशीलता में वृद्धि – पहले व्यक्ति को अपनी जमीन और घर की ड्योढ़ी से अत्यधिक लगाव था। वह किसी भी दशा में अपना गांव, क़स्बा छोड़ना नहीं चाहता था, किन्तु औद्योगिक क्रांति और आवागमन की सुविधाओं ने व्यक्ति को नगरों में काम खोजने और नौकरी करने के लिए उत्प्रेरित किया। नित्य लाखों की संख्या में व्यक्ति एक गांव से एक नगर, एक नगर से दुसरे नगर और नगर से महानगर में काम की तलाश में जाता है। अस्तु वे गंदी बस्तियों के शरण में जाते हैं। इस तरह गंदी बस्तियों का विकास निरन्तर होते जा रहा है ।

शोषण की प्रवृति– उत्पादन का महत्वपूर्ण अंग श्रमिक, मलिन बस्तियों में रहता है और मालिक वातानुकूलित बंगलों में। पूंजीवादी व्यवस्था की यह बुनियादी नीति है कि आप आदमी की रोजी–रोटी की परेशानियों में फसायें रखें। भूखा व्यक्ति अपने परिवार के पेट भरने की चिंता पहले करता है और कुछ बाद में। उसे जीने की इतनी सुविधाएं नहीं देते जिससे की वह दहाड़ने लगे और बाजू समेटकर अपने अधिकारों की मांग करने लगे। इसलिए उसे अभाव में जीने दो जिससे कि वह सदैव मालिकों का दास बनकर रहें। उसकी स्थायी नियति, शोषण करना है श्रमिकों को सुविधायें पहुंचना नहीं। अंततः निर्धन शोषित श्रमिक रहने के लिए मलिन बस्तियों की शरण में ही जाता है।

सुरक्षा का स्थल है – गाँव छोड़कर ग्रामीण इसलिए भी नगरों में आ रहा है क्योंकि वहां सुरक्षा नाम की कोई चीज नहीं है। चोरी और डकैती सामान्य बात है। डकैतों का बढ़ता हुआ आतंक ग्रामीणों को गाँव छोड़ने के लिए मजबूर करता है। नगर में प्रशासक, पुलिस की व्यवस्था है जो उनके जान–माल की रक्षा करती है। इसलिए नगर की जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है और इसी के साथ गंदी बस्तियों में भी वृद्वि हो रही है।

ग्रामीण बेरोजगारी – भारतीय निर्धन गांव जहाँ वर्ष में कुछ ही महीने व्यक्ति को काम मिलता है और शेष माह वह बेरोजगारी के अभिशाप को भोगता है। ग्रामीण क्षेत्र में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं है कि व्यक्ति को खाली समय में काम मिल सके। इसलिए खेती के समय जो ग्रामीण व्यक्ति गाँव में उपलब्ध रहता है उसके पश्चात वह नगरों में काम करने आ जाता है। इनमें से अधिकांश व्यक्ति रिक्शा चालक, ठेले खींचने वाले, खोमचा लगाने वाले या मिल में श्रमिक होते हैं अथवा कोई छोटा–मोटा कार्य करके अपनी जीविका अर्जित करते हैं। उनमें से अधिकांश व्यक्ति गंदी बस्तियों में रहते हैं। यह उनकी विवशता भी है ।

नगर नियोजन का अभाव– नगर में गंदी बस्तियों का यदि विकास हो रहा है तो इसका बहुत कुछ उत्तरदायित्व नगरपालिका और सरकार पर है। यदि नगर का विकास सुनियोजित और योजनाबद्ध ढंग से किया जाए तो गंदी बस्तियों का विकास शायद इस रूप में संभव न हो पता और ये नगर और मानवता के कलंक न बन सकते ।

दुष्परिणाम– धरती के ये नरक सभ्य मानव जाति के लिए कलंक है। ये वे स्थान हैं जहाँ से असंख्य बुराइयां उत्पन्न होती हैं और सम्पूर्ण समाज को निगल जाती है। गंदी बस्तियों के दुष्परिणाम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर समझे जा सकते हैं :

यह वह स्थान है जहाँ कमरों में भीड़ रहती है और व्यक्ति एकांत के लिए व्याकुल रहता है। एक–एक कमरे में 10–15 व्यक्ति रहते हैं। इनमें कुछ भी गोपनीय नहीं रहता है। शीघ्र ही बच्चे बुरी आदतों को ग्रहण कर लेते हैं ।

गन्दगी से परिपूर्ण यह स्थान बीमारियों के केंद्र हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह मानव समाज नरक है। यहां सब कुछ प्रदूषित है। न यहां शुद्ध जल है न वायु और न वातावरण बच्चे इस नारकीय स्थान में रहतें हैं। यहां क्षय रोग सामान्य बात है। पेचिश, डायरिया तथा अनेक रोग यहां के बच्चों की विशेषता है ।

बच्चे सामाजिक बुराइयों के बीच जन्म लेते हैं। इनके चारों तरफ असामाजिक वातावरण होता है । ये सहज ही बुराइयों को अपना लेते हैं और बचपन से ही ये सब करने लगते हैं जो अपराध है। इनके मध्यम से ही चरस, गांजा कच्ची शराब बेची जाती है। यह अनैतिक यौन संबधों की दलाली करते हैं। जुओं के अड्डों की देख–रेख करते हैं। इन्हें इसी रूप में प्रशिक्षित किया जाता है। आगे चलकर यह गंभीर अपराधी बनते हैं।

यहां व्यक्तित्व और परिवार का निर्माण होता। अधिकांश परिवार अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए उचित व अनुचित सभी प्रकार के कार्य करते हैं। शराब ,जुआ, अनैतिक यौन संबंध, चोरी आदि व्यक्ति को जहां नष्ट करते हैं वही परिवार को भी विघटित करते हैं। बच्चे इसे देखकर अपने पूर्वजों की परंपरा का निर्वाह भविष्य में भी करते हैं ।

ये वे स्थान हैं जहां सामाजिक आदर्श, मूल्य, नैतिकता, सहिष्णुता आदि के दर्शन होते हैं। ये अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए सब कुछ करने के लिए तैयार रहते हैं। इन्हें खरीदकर इनसे कुछ भी कराया जा सकता है। अराजक तत्व यहां बनाये जाते हैं। ये वे व्यक्ति हैं जो समाज में गड़बड़ियाँ उत्पन्न करने के लिए ख़रीदे जाते हैं। इस प्रकार के कार्यों से समाज विघटित होता है।

बंदी बस्तियों की व्याख्या करते हुए डॉ राधा कमल मुखर्जी ने लिखा है–"औद्योगिक केंद्रों की हजारों मलिन बस्तियों ने मनुष्यत्व को पशु बना दिया है, नारीत्व का अनादर होता है और बाल्यावस्था को आरम्भ में ही विषाक्त किया जाता है। ग्रामीण सामाजिक सहिंता श्रमिकों को औद्योगिक केंद्रों में अपनी पत्नियों के साथ रहने के लिए हतोत्साहित करती है। ऐसी दशा में जहां कम आयु में विवाह प्रचलित है, वहां युवा श्रमिक, जिनसे आप वैवाहिक जीवन प्रारंभ ही किया हो, नगर के आकर्षण से प्रभावित होता है।

फिर भी बेहतर नहीं हैं हालात

भारत जैसे देश में महिला श्रम बल भागीदारी को सही मायनों में अर्थव्यवस्था के विकास का इंजन कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। महिला श्रम बल भागीदारी दर की स्थिति को देखते हुए देश के तीव्र विकास कर सकने की क्षमता का संकेत प्राप्त होता है। हालाँकि श्रम बाज़ार में महिलाओं की भागीदारी और वृहद् विकास परिणाम के बीच का संबंध बेहद जटिल है।

- श्रम बल में महिलाओं की भागीदारी के मामले में विकासशील देशों और उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं में व्यापक अंतर भी नज़र आता है। यह अंतर पुरुषों की भागीदारी में अंतर की तुलना में कहीं अधिक व्यापक है।
- मध्य पूर्व, उत्तरी अफ्रीका और दक्षिण एशिया में कामकाजी आयु की महिलाओं में से एक–तिहाई से भी कम की श्रम बल में भागीदारी है, जबकि पूर्वी एशिया और उप–सहारा अफ्रीका में यह अनुपात लगभग दो–तिहाई तक है।
- यह भिन्नता आर्थिक विकास, शिक्षा के स्तर में वृद्धि, प्रजनन दर में गिरावट और सामाजिक मानदंडों जैसे कई आर्थिक व सामाजिक कारकों से प्रेरित है।
- इसके अतिरिक्त विकासशील देशों में यह अंतर अधिक स्पष्ट है और दक्षिण एशियाई देशों में यह असमानता सबसे अधिक नज़र आती है।
- दक्षिण एशिया में महिला श्रम बल भागीदारी दर वर्ष 2013 में मात्र 30.5 प्रतिशत थी, जबकि पुरुषों के मामले में यह दर 80.7 प्रतिशत थी।
- इस भूभाग में महिला श्रम बल भागीदारी दर में उल्लेखनीय विविधता नजर आती है और पारंपरिक लैंगिक भूमिकाओं, अवसरों तथा रूढ़ियों का सकल परिणामों पर असर लगातार पड़ता रहता है।
- दीर्घावधिक रुझान दर्शाते हैं कि बांग्लादेश में महिलाओं की श्रम बल भागीदारी में वृद्धि हुई है, जो रेडीमेड वस्त्र क्षेत्र के विकास और सूक्ष्म–ऋण (माइक्रो–क्रेडिट) के प्रसार से विशेषकर ग्रामीण महिला रोज़गार की स्थिति में वृद्धि के कारण हुई है।
- इस भूभाग में नेपाल (जहाँ महिला श्रम बल भागीदारी वर्ष 2010–11 में 79.4 प्रतिशत तक पहुँच गई थी) और मालदीव (वर्ष 2009–10 में 54 प्रतिशत) के बाद बांग्लादेश ने सबसे बेहतर प्रदर्शन किया है।
- महिला श्रम बल भागीदारी दर में पाकिस्तान में भी वृद्धि हुई है (हालाँकि यह वृद्धि बेहद कम है और शहरी क्षेत्र में यह भागीदारी विशेष रूप से कम है) जबकि श्रीलंका में यह भागीदारी अपेक्षाकृत स्थिर बनी हुई है (जबकि हाल के वर्षों में श्रीलंका ने मज़बूत आर्थिक विकास दर्ज किया है और उसके सामाजिक संकेतकों में व्यापक सुधार आया है)।

भारत में महिला श्रम बल भागीदारी में गिरावट

- दीर्घावधिक रुझान दर्शाते हैं कि भारत में महिला श्रम भागीदारी की स्थिति समस्याजनक है। महिला भागीदारी दर वर्ष 1999–2000 के 34.1 प्रतिशत से घटकर वर्ष 2011–12 में 27.2 प्रतिशत हो गई जबकि भागीदारी दर में व्यापक लैंगिक अंतराल भी बना रहा।
- इसके अतिरिक्त शहरी और ग्रामीण भागीदारी दर में व्यापक अंतराल बना हुआ है।
- ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी दर वर्ष 2009–10 के 26.5 प्रतिशत से घटकर वर्ष 2011–12 में 25.3 प्रतिशत हो गई, जबकि इसी अवधि में शहरी महिलाओं की भागीदारी दर 14.6 प्रतिशत से बढ़कर 15.5 प्रतिशत हो गई।
- महिला श्रम बल भागीदारी दर में कोई समग्र परिवर्तन नहीं आया है और इसे 22.5 प्रतिशत (सभी आयु वर्ग के लिये) आकलित किया गया, जो वर्ष 2009–10 में 23.3 प्रतिशत दर्ज किया गया था।
- इस परिप्रेक्ष्य में, ग्रामीण क्षेत्रों में महिला श्रम बल भागीदारी दर में नियमित गिरावट की प्रवृत्ति नजर आती है, जबकि शहरी क्षेत्रों में इसमें मामूली वृद्धि देखने को मिली है।

भारत में महिला श्रम बल भागीदारी में कमी के प्रमुख कारण

श्रम बल में महिलाओं की भागीदारी का निर्णय और उनकी समर्थता उन विभिन्न आर्थिक व सामाजिक कारकों पर निर्भर होता है, जो पारिवारिक स्तर और स्थूल–स्तर (मैक्रो–लेवल) पर जटिल रूप से सामने आते हैं। वैश्विक साक्ष्यों से पता चलता है कि इसमें शैक्षणिक योग्यता, प्रजनन दर व विवाह की आयु, आर्थिक विकास/चक्रीय प्रभाव और शहरीकरण जैसे घटक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन विषयों के साथ ही सार्वजनिक क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका को निर्धारित करने वाले सामाजिक मान दंडों का भी प्रभाव पड़ता है।

चार मुख्य बिंदुओं पर केंद्रित

भारत में महिला श्रम बल भागीदारी में गिरावट की प्रवृत्ति पर जारी विमर्श चार मुख्य बिंदुओं पर केंद्रित रहा हैः 1. युवा महिलाओं के शैक्षणिक नामांकन में वृद्धि; 2. रोज़गार अवसरों की कमी; 3. भागीदारी पर पारिवारिक आय का प्रभाव और 4. आकलन विधि।

पिछले लगभग एक दशक में भारत ने शिक्षा तक स्त्रियों की पहुँच के मामले में उल्लेखनीय प्रगति की है, जो माध्यमिक विद्यालयों में कामकाजी आयु की स्त्रियों के नामांकन के बढ़ते स्तर से प्रकट होता है।

इसका कारण यह भी है कि देश में आर्थिक विकास की प्रकृति ऐसी रही कि उन क्षेत्रों में बड़ी संख्या में रोज़गार का सृजन नहीं हुआ, जो महिलाओं को, विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं को अपनी ओर आकर्षित कर सकता है।

अपर्याप्त रोज़गार सृजन के बावजूद पारिवारिक आय में वृद्धि हुई, जिसकी वज़ह से संभावित रूप से महिलाओं की भागीदारी में कमी आई, विशेष रूप से प्राथमिकताओं में परिवर्तन के कारण उनकी सहायक गतिविधियों में कमी आई (इसे 'आय प्रभाव' कहा जाता है)।

नहीं दर्ज होते महिलाओं के घरेलू कामकाज के अधिकांश आँकड़े

- भारत में अधिकांश महिलाएँ कार्यरत हैं और किसी–न–किसी रूप में अर्थव्यवस्था में योगदान कर रही हैं, लेकिन उनके अधिकांश कार्य दर्ज नहीं होते अथवा आधिकारिक आँकड़ों में उन्हें कोई जगह नहीं मिलती और उनकी कार्य भागीदारी के पुष्ट आँकड़े प्राप्त नहीं हो पाते।
- भारत में महिलाओं का एक बड़ा अनुपात अपनी कार्य–स्थिति को घरेलू कार्य के रूप में दर्ज कराता है अर्थात अधिकांश महिलाएँ घरेलू कामकाज में संलग्न रहती हैं।
- वर्ष 2011–12 में 35.3 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएँ और 46.1 प्रतिशत शहरी महिलाएँ घरेलू कार्यों में संलग्न थीं, जबकि वर्ष 1993–94 में यह संख्या क्रमशः 29 प्रतिशत और 42 प्रतिशत थी।
- इस प्रकार त्रुटिपूर्ण आकलन न केवल स्तर को प्रभावित करता है बल्कि भागीदारी दर के रुझान को भी गलत दर्शाता है।
- सामान्यतः यह बात भी उल्लेखनीय है कि घरेलू कार्यों में संलग्न महिलाओं का एक बड़ा प्रतिशत तभी कार्य करने का इच्छुक था यदि कार्य उन्हें घर में ही उपलब्ध हो।

क्या किया जाना चाहिये?

इन तथ्यों पर विचार करते हुए भारत और इस संपूर्ण भूभाग के नीति–निर्माताओं को महिलाओं के लिये श्रम बाज़ार परिणामों में सुधार हेतु एक वृहद् दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है।

- इसके लिये शैक्षणिक व प्रशिक्षण कार्यक्रमों की पहुँच एवं उपयुक्तता, कौशल विकास, शिशु देखभाल की व्यवस्था, मातृत्व सुरक्षा और सुगम व सुरक्षित परिवहन के साथ–साथ ऐसे विकास प्रारूप को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है, जो रोज़गार अवसरों का सृजन करे।

- मानक श्रम बल भागीदारी दर की प्राप्ति के लक्ष्य से आगे बढ़ते हुए नीति–निर्माताओं को यह देखना चाहिये कि बेहतर रोज़गार तक पहुँच अथवा बेहतर स्वरोज़गार तक महिलाओं की पहुँच हो रही है या नहीं और देश के विकास के साथ उभरते नए श्रम बाज़ार अवसरों का लाभ वे उठा पा रही हैं या नहीं
- महिलाओं की भागीदारी को प्रोत्साहित कर इन्हें सक्षम बनाने वाले नीतिगत ढाँचे का निर्माण किया जाना चाहिये, जहाँ महिलाओं के समक्ष आने वाली लैंगिक बाधाओं के प्रति सक्रिय जागरूकता मौजूद हो। इस क्रम में लैंगिक असमानता दूर करने वाली प्रभावी नीतियों को विकसित किये जाने की आवश्यकता है।
- अंततः लक्ष्य केवल यह नहीं है कि महिला श्रम बल भागीदारी में वृद्धि हो, बल्कि उन्हें उपयुक्त कार्य के लिये उपयुक्त अवसर प्रदान करना है, जो महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण में योगदान करेगा।

संदर्भ एवं ग्रन्थ सूची

1. डा0 अम्बालाल कटारा, भूगोल विभाग, मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर।
2. श्रीमती सुनीता चौहान, सहा0 प्राध्यापक, कैरियर महाविद्यालय, भोपाल ।
3. सांख्यिकी मंत्रालय, आवधिक श्रमबल सर्वेक्षण रिपोर्ट ।
4. राजस्थान पत्रिका एवं दैनिक भास्कर , उदयपुर संस्करण, 22 मार्च 2017 ।
5. महाजन डॉ0 /धर्मवीर ,वं डॉ0 कमलेशी भारती, समाज ,व संस्कृति विवेक प्रकाशन) दिल्ली 2013 पृ0– 13